

सत्य गुरु कबीर

Satya Guru Kabir

śrīmad ādibrahmanirūpaṇam - Special Issue

श्रीमद् आदिब्रह्मनिरूपणम् विशेषाङ्कः

॥ सत्यनाम ॥



Saaheeb teri saahebi, saba ghat rahi samaay
Jyon mehendi ke paat me, laali lakhi na jaay

The godliness of the paramaatma is present in everything, just like the undiscernable red colour in the mehendi leaves. And as on crushing the leaves that the reddish tint appears, likewise this godliness appears only when one uses one's mind to see it.

Shree Kabir Council
La Caverne, Vacoas

Shree Satya Kabir Mukhtamaneenaam
Dharmic Sabha - Pointe Aux Piments

Shree Mahaprabhu Kabir Dharmasthan
Morcellement St. André

सम्पादकीय

सृष्टि के प्रारम्भ से ही मानव आत्म-शान्ति के अन्वेषण में संलग्न है। परिणामस्वरूप वेदों का संगायन, उपनिषदों की रचना एवं इनकी ही विशद व्याख्या के रूप में पुराण एवं स्मृति-ग्रन्थों का प्रणयन हुआ। अद्यावधि सन्त-महापुरुष अपने ज्ञान एवं अनुभव से मानव-जगत् को आत्म शान्ति प्रदान करने का प्रयास कर रहे हैं। साहेब कबीर कहते हैं:-

*आग लगी आकाश में, चुवि-चुवि गिरे अंगार।
सन्त न होते जगत में, जर मरता संसार॥*

सन्तों को जंगम तीर्थ कहा गया है। वे जहाँ होते हैं वह स्थान तीर्थ (पवित्र स्थान) में परिणत हो जाता है। सन्तों का, समाज सदा ऋणी रहा है; क्योंकि सन्तों ने सदा ही अपनी वाणी एवं कर्म से लोक कल्याण का कार्य किया है।

प्राचीन युग से एक धारा जहाँ आत्म-तत्त्व की प्राप्ति के उपायों के अन्वेषण में लगी है वहीं दूसरी धारा मानव जगत् को भौतिक-सुख प्रदान करने हेतु संलग्न है। इस दूसरी धारा ने तीव्रगामी यान, शीघ्र स्वास्थ्य के साधन एवं सुखी जीवन के अन्य उपकरणों की ओर अपना ध्यान केन्द्रित किया है। और उसमें उत्तरोत्तर सफलता भी प्राप्त कर रही है। वैज्ञानिक-संसाधनों ने विश्व को एक नगर के रूप में परिणत कर दिया है; जहाँ एक भाग में होनेवाली घटना की सूचना दूसरे भाग में कुछ पलों में ही प्राप्त हो जाती है। सुगमता पूर्वक दूर-स्थित आत्मीय-जन से कुशल-क्षेम एवं उनको अपना संदेश प्रेषित कर सकते हैं।

भारतीय चिन्तन-धारा ने उपरोक्त दोनों पक्षों पर सदा ध्यान दिया है। किन्तु उसकी विशेष अभिज्ञान उन गूढ़ विषयों के उद्घाटन से है जिसका मानव जगत् सदा से पिपासु रहा है। भारत के ऋषि-मुनियों ने जितना श्रम "आत्म-तत्त्व" के परिज्ञान में लगाया है सम्भवतः उतना विश्व के किसी भी अन्य संस्कृति ने नहीं किया है। आत्म-तत्त्व के अन्वेषक इसी कारण विश्व के कोने-कोने से भारत आते रहे हैं और पिपासा शान्त करते रहे हैं।

अन्तरिक्ष में हो रहे क्रिया-कलापों के परिज्ञान हेतु गये "कोलम्बिया अन्तरिक्ष यान" कुछ दिनों पूर्व ही दुर्घटनाग्रस्त हुआ और उसमें के सातों यात्री दुःखद काल कवलित हुये (हम उन्हें हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं)। किन्तु भविष्य में भी मानव की सहज प्रवृत्ति अनजाने को जानने की अदम्य-इच्छा उसे ऐसी साहसिक यात्राओं से रोक न सकेगी।

वैज्ञानिक-अन्वेषण एवं आत्म-तत्त्व अन्वेषण सदा ही समानान्तर चलते आ रहे हैं। आत्म-तत्त्व का अन्वेषक सम्भवतः एक दिन आत्म-शान्ति प्राप्त कर सकता है; किन्तु विज्ञान का अन्वेषण कभी भी समाप्त नहीं होता। यही कारण है इसमें प्रतिस्पर्धा है और विश्व-विनाश का हेतु भी। प्रतिस्पर्धा के कारण ही सम्पूर्ण विश्व कलान्त है, दुःखी है।

"जगत् का प्रत्येक प्राणी एक निश्चित आयु लेकर जन्म लेता है, आयु पूर्ण होने पर सभी को यहाँ से जाना होता है।" यह एक सहज ज्ञान है जिससे सभी अवगत

हैं। किन्तु वे जन धन्य हैं जिन्होंने अपने जीवन में लोक कल्याण करते हुये आत्म-तत्त्व के परिज्ञान में अपना बहुमूल्य समय अर्पित किया है।

"ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः" इस प्राचीन आप्त वचन के अनुसार जब तक मनुष्य ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेता उसे मुक्ति नहीं मिल सकती। किन्तु "ज्ञानमुत्पद्यते पुंसां क्षयात्पापस्य कर्मणः" अर्थात् जब तक हमारे पूर्व जन्मों के एवं इस जीवन में किये गये अपकर्मों का नाश नहीं हो जाता तब तक ज्ञान की उत्पत्ति नहीं हो सकती है। अपकर्मों का नाश गुरु-उपदेश, गुरु-भक्ति एवं उपदिष्ट साधना से हो सकती है। कर्मों के उन्मूलन का एक रूप यह भी कहा गया है:-

*"भिद्यते हृदयग्रन्थिच्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि, तस्मिन् दृष्टि परावरो॥"*

अर्थात् इस श्रुति वचन के अनुसार सूक्ष्म शरीर रूप जड़ और चेतन की ग्रन्थि के नाम से कहे जाने वाले आवरण, तज्जन्य संशय तथा कर्मों का समूलोन्मूलन हो जाता है। कर्मों के उन्मूलन से जीवात्मा मुक्त हो जाता है।

"फिर नहीं आवे फिर नहीं जाई आदि अक्षर में रहे समाई॥"

*"कहहि कबीर पुकारि, समुझ मन भावना।
हंस गये सतलोक, बहुरि नहि आवना॥"*

मानव-मन जिस भव-ताप से परितप्त है, आत्मज्ञान के बाद यही मन जल के समान शीतल हो जाता है।

*"यह मन तो शीतला भया, जब उपजा ब्रह्मज्ञान।
जोहि बैसन्दर, जग जरे, सो पुनि उदक समान॥"*

जब तक यह आत्मज्ञान नहीं मिल जाता मनुष्य भटकता ही रहता है:-

"आत्म ज्ञान बिना नर भटके, कोई मथुरा कोई काशी॥"

"बीजक" ग्रन्थ में सद्गुरु कहते हैं कि यह आत्मज्ञान शरीर रहते हुये ही गुरु कृपा से प्राप्त साधना से, प्राप्त कर लेना चाहिये; क्योंकि जिनको जीवन्मुक्ति प्राप्त होती है, उनको ही विदेह मुक्ति मिल सकती है।

*"जीयत न तरे मुये का तरिहौ, जियतहि जो न तरो
गहि परतीति कीन्ह जिन जासो, सोई तहाँ अमरो॥"*
'केनोपनिषद्' में इन्हीं भावों को इस रूप में प्रस्तुत किया गया है:-

*"इह चेदेदीदथ सत्यमस्ति, न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः।
भूतेषु-भूतेषु विचिन्त्य धीराः, प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति॥"*
साहेब कबीर कहते हैं:-

*"जाको दर्शन इत है, वाको दर्शन उता।
जाको दर्शन इत नहीं, वाको इत न उता॥"*

यह अङ्ग विशेष रूप से आत्म-ज्ञान की इच्छा रखने वाले साधु-भक्त जनों को समर्पित है; क्योंकि "श्रीमद् आदि-ब्रह्मनिरूपणम्" ग्रन्थ 'आत्मज्ञान' की साधना का मार्ग सरल एवं सुगम रूप में प्रशस्त करता है, मार्गदर्शन करता है।

॥ इति शुभम् ॥

आचार्य महंत संत सर्वेश्वर दास शास्त्री
|| satyanāma ||

Satya

Guru Kabir



A Quarterly Journal on the teachings of Sadguru Kabir Saheb.

Kabirābd 604 āśvina-kārtika-mārgaśīrṣa 2059

October-November-December 2002 Vol. 1 No. 3

Founder

M. Komaldass

H. Chief Editor

Acharya Mahant

Sant Sarveshwar Das Shastri

Saahitya-Vyaakaran-Vedaanta Saankhyayogaacharya-I.I.B

Editor in Chief

M. Amardass

Board of Editors

Poorundass, Rajiv

M. Ravindrass

M. Prabhatdass

Advisor

Rajnarain

Address

4, Mosque Road

Morcellement St Andre

Plaine des Papayes

Mauritius

P.O. Box 637

Port Louis, Mauritius

Tel. (230) 261 7708

(230) 261 7773

e-mail: satyaguru_kabir@hotmail.com

Subscription

4 yearly issues

Yearly subscription Rs 100.00

Unit Price Rs 25.00

Printed at

Globe Printing, 41, Wellington St.,

Port Louis, Tel/Fax.: 208-1863

Scheme of Transliteration

ब	a	अं	m̐	छ	cha	थ	tha	र	ra
आ	ā	अः	ḥ	ज	ja	द	da	ल	la
इ	i	ऋ	ṛ	झ	jha	घ	dha	व	va
ई	ī	लृ	ḷ	ञ	ña	न	na	श	śa
उ	u	क	ka	ट	ṭa	प	pa	ष	ṣa
ऊ	ū	ख	kha	ठ	ṭha	फ	pha	स	sa
ए	e	ग	ga	ड	ḍa	ब	ba	ह	ha
ऐ	ai	घ	gha	ढ	ḍha	भ	bha	क्ष	kṣa
ओ	o	ङ	ṅa	ण	ṇa	म	ma	त्र	tra
औ	au	च	ca	त	ta	य	ya	ज्ञ	gya

साखी - sākhī

एक शब्द गुरुदेव का, ताका अनन्त विचार ।

थाके मुनिजन पंडिता, वेद न पावे पार ॥

eka śabda gurudeva kā, tākā ananta vicāra |
thāke munijana paṇḍitā, veda na pāve pāra ||

One word of the *Sat Guru* gives limitless meanings.

Munis and *Pandits* became exhausted trying to find its meanings, *Vedas* cannot fathom its depth.

Commentary :

The word of God given by *Sat Guru* is unfathomable. Only the humble devotee can get it. *Munis* and *Pandits*, full of ego for their knowledge, cannot find it and even the *Vedas* mention very little about it.

Commentary by **Acharya Mahant Jagdish Das Shastri**
Jamnagar, Gujarat, India

Cover : Sadguru Kabira Sāheba and two of his main disciples. In the left inset is śrī Dhanī Dharmadāsa Sāheba and the right inset shows śrī Kamāla Sāheba. śrī Dharmadāsa Sāheba was the *nagara-seṭha* of the Bāndhavagaḍha (U.P India) King. He became the disciple of Sadguru Kabira Sāheba and spent all his wealth for the welfare of the people. Sāheba Ji made śrī Kamāla Sāheba his disciple after he brought him back to life and inspired him to work for the happiness of the society.

No part of this publication may be reprinted or otherwise reproduced without the prior permission from the chief editor.

The opinions and thoughts expressed in the articles published in this journal are those of the writers and not those of the Satya Guru Kabir Committee.

www.geocities.com/sahebkabir

|| satyanāma ||.

atha grantha śrīmad ādibrahmanirūpaṇam |

maṅgalācaraṇa |

naumyādibrahma sarvasya, kāraṇaṁ karaṇaṁ tathā |
tadrūpaṁ sadguruṁ vande, karmarekhāprasāntaye ||1||
sadguroḥ pādapadmaṁ, ye 'nīsaṁ dhyāyanti manavāḥ |
nāsti duḥkhaṁ bhayaṁ teṣāṁ, janma mṛtyuśca no tathā ||2||
vitatāsyō mahākālah, sansāraṇakesarī |
taddhanṭṛ sadguroṇāma, nopāyāntaramasti hi ||3||
ādināma nirālambaṁ, paraṁ pāraṇca tasya tat |
agyo naiva vijānāti, jānāti gurupūjakaḥ ||4||

|| sukṛta uvāca ||

mahimā sadguroṇāmno, bho gyānistvanmukhācchrutaḥ |
ādināma tvidānīm yad-viśvāhetu vada prabho ! ||5||

|| sadgururuvāca ||

mantraṁ nirakṣaraṁ mūlaṁ, dharmadāsa ! sucintaya |
ādināma tadevāsti, sarvātītaṁ svayaṁprabhu ||6||
kṣaraḥ sarvāṇi bhūtāni, kūṭastho 'kṣara ucyate |
bhinnam nirakṣaraṁ nāma, tasyāpi nirṇayaṁ śṛṇu ||7||
akāraśca hyukāraśca, makāraśca tataḥ param |
eṣāṁ bhedaṁ vijānīhi, yathārthaṁ prathamam tvamum ||8||
tataḥ prakāśi teṣāṁ, yatparaṁ kūṭasthamakṣaram |
tasmādapi paraṁ śreṣṭhaṁ, cintaya tvarṁ nirakṣaram ||9||
paraṁ tatvarṁ paraṁ dhāma, cāvyayaṁ tatparātparam |
gyānagamya madhiṣṭhānaṁ, satyalokanivāsi tat ||10||
tadevāstyajarannāma, dṛḍhībhūtā japanti ye |
te hansā hi mahākālaṁ, jītvā so 'haṁ labhanti vai ||11||
vedānāṁ sarvaśāstrāṇāṁ, so 'haṁ syātsārabhūtaḥ |
tasyāpi pralayaḥ kāryo, gyānayogabalena ca ||12||
sahayośca yadā tena, pralaya ubhayoḥ kṛtaḥ |
o amiti dvivarnau ca, tadā śiṣṭau tayorapi ||13||
sandhāne hi kṛte śiṣṭa, oṅkāraśca trivarnakaḥ |
trivarnānāṁca viśliṣya, layaḥ kāryo hyanukramāt ||14||
akārasya hi tūkāre, cokārasya mavarṇake |
makārasya layaḥ kāryo, bindau mātrātmake tathā ||15||
yadārdhamātrikāyāṁ hi, bindorapi layaḥ kṛtaḥ |
cārdhamātrālaye jāte, nirakṣaraṁ sthitaṁ tadā ||16||
puṣpadvīpo mahādvīpaḥ, puruṣasya nijālayaḥ |
taṁ prati gacchati prāṇī, nirakṣaravicāraṇāt ||17||
śabda nirakṣaraḥ sāraḥ, kathyate sujanairjanaiḥ |
tajgyātā hi labhecchīghraṁ, sarvapūṇyaphalāni ca ||18||



gayā gaṅgā prayāgaśca, vrataṁ dānaṁ tathaiva ca |
etāni sārāśabdena, na tulyanti kadācana ||19||

kalpakoṭi sahasrāṇi, kāśivāsena yatphalam |
bhavettato 'dhikarṇaṁ puṇyaṁ, kṣaṇārdharṇaṁ śabdaciṇṭanāt ||20||

śabdasāraḥ param guhyo, devānāmapi durlabhaḥ |
nareṇa sa katham prāpyo, daridreṇa dhanam yathā ||21||

labhettattvadhanam yastu, gurubhaktibalena ca |
tasya karmāṇi naśyanti, pūrvāṇyatha parāṇi ca ||22||

vartamānāni naśyanti, śighram tattvaprabhāvataḥ |
jānihi tvaṁ vicāreṇa, gyānasyaitanmahatphalam ||23||

yadi hanti ca lakṣaṁ gā, viprāṅkoṭiṅca hanti vā |
sukarmāṇi tathā kuryāt-tattvagyāni na lipyate ||24||

snānaśaṅkā na tasyāsti, vrataśaṅkā tu naiva hi |
tīrthaśaṅkā na kācidvā, yasya tattvaṁ vaseddhṛdi ||25||

aghānām vā kṛtaḥ puñjaḥ, pūrvasminniḥajanmani |
dahyate 'nena gyānena, sarvastṛṇamivāgninā ||26||

sahasraṁ cāśvamedhānām, sampūrṇam ca bhavedyadi |
merutulyam kṛtaṁ dānam, hemnastattvena no samam ||27||

nirakṣaram param dhyānam, nirakṣaram param tapah |
agamyam gacchati prāṇi, labhedyadi nirakṣaram ||28||

mukhanāsikaniryāntam, yadā rundhyātsamīraṇam |
gurugamātsphuṭennādo, brahmarandhre 'pyanāhataḥ ||29||

durgamam trikuṭīmārgam, laṅghed guruprasādataḥ |
tadā śūnye mahadrūpam, paśyejjyotirnirāmayam ||30||

ādimaḍhyāntaśūnyāni, jyotiretatprakāśate |
eṣāṁ bhedaṁ na jānāti, vaiṣṇavaḥ so 'pi no bhavet ||31||

kamalam caṣṭamam prāpya, paśyedrūpam mahādbhutam |
jyotistatra vinā dīpam, bhavedvādyam vinā dhvaniḥ ||32||

koṭicandrārkaśaṅkāśam, asaṅkha dala paṅkajam |
dṛṣṭvā yogīśvaro hyagre, śāntim yāti parāmalam ||33||

nirādhāram nirākāram, divyarūpa manāmayam |
yadā paśyati yogīndraḥ, kālo 'pi kiṅkaro bhavet ||34||

caturdaśānnimānllokān, pālayanti nirantaram |
sevante yoginam te 'pi, hyaśaṅkhyadaladarśinam ||35||

ajarāmarāṇam śudham, satyalokam sanātanam |
avaśyam gacchati prāṇi, sadguroścātisevayā ||36||

mṛdaṅgāḥ subhagāstatra, vādyante ca vinā karaiḥ |
nṛtyanti nartakāścaiva, satyaloke vinā padaiḥ ||37||

śṛṇvanti ca vinā śrotair-nānāśabdānvilakṣaṇān |
gāyanti ca mahārāgān gāyakāśca vinā mukhaiḥ ||38||

paśyanti ca vinā netrai, rūpāni vividhāni ca |
vinodakena tatraiva, vicayaścollasanti ca ||39||

nānāvarṇāni ratnāni, viśadāni tadālaye |
 prakāśam kurvate nityam, akhaṇḍam naiva khaṇḍyate ||40||
 udḍīyante vinā pakṣair-bhramarāḥ priyabhāṣiṇaḥ |
 sucitrāṇi vinā hastair-vinābhairadyotate tadṛit ||41||
 vinā giriṁ mayūrāṇām, bhavetkekā śruti priyā |
 kūjanti kokilāstatra, vinā hi puṣpavāṭikām ||42||
 nālikām hi vinā śubhram, padmam saptadalairyutam |
 dṛśyate rūpapuñjam tat-tena tulyam ca no 'param ||43||
 muktāstatra vinā śuktim, koṭibhānusamā dyutau |
 niścitam cāsti tatraiva, pīyūṣam bhojanam varam ||44||
 candro bhānurna kham vāyuh, pṛthivyagnirjalam na hi |
 pañcabhyo 'sti tathā loke, rūpamanyadvilakṣaṇam ||45||
 paśyanti tatsukham hansā, jīvanmuktā guṇañjayāḥ |
 sujapantya japājāpam, mudrām vāyunmanindhṛtāḥ ||46||
 bhūtvā te gagane magnā, dahanti triguṇānapi |
 nāśayanti dvidhābhāvam, cittam kṛtvā ca susthiram ||47||
 cintayanti na ye baddhāḥ, karmabhiḥ sārāśabdakam |
 ye santi kṣīṇakarmāṇāś-cānandam sulabhanti te ||48||
 yathā raṇapravṛttau hi, kaṣcidvīro vilakṣyate |
 koṭiṣvapi tathā punsu, kaṣcicchabdasukham labhet ||49||
 yathā vane pradīpte vai, pīḍitaḥ pathiko janaḥ |
 prāpte mahāhrde śāntim, tathā kaścillabhet sukham ||50||
 yāte hi śuṣkatām tāle, pāṭhīnā duḥkhitā yathā |
 bhūyastatra bhavedvṛṣṭir-labhante paurvakam sukham ||51||
 rātryāgaram yathā kokau, yāto dṛṣṭvātiśokatām |
 sūryodayam punardṛṣṭvā, labhete saukhyakam tathā ||52||
 prāpnuvanti mahāsaukhyam, divyagyāne ratā janāḥ |
 vismṛtya jagato duḥkham, śabdamadhye vasanti ca ||53||
 vacasā 'kathanīyam taj-gyānenāpyagamam tathā |
 manah pangurbhavedyasya, tasya tatsugamam sukham ||54||
 svataḥ prakāśakam rūpam-anādi sukhasāgaram |
 tasya bhedaṁ na jānanti vidhirhariharāvapi ||55||
 narako 'yam nṛdeho 'sti, pratyakṣam duḥkhabhājanam |
 janmamṛtyujarāgrastah, katham tatprāpakam sukhī ||56||
 tam prāpya bhajate yo 'pi, śabdasāram suniścalam |
 sa cātiśuddhatām yāti, vāyaso hansatām yathā ||57||
 hansā gacchanti dehānte, labhante ca sukham bahu |
 loke 'sti puṣpavacchayyā, bhojanañcāmṛtam tathā ||58||
 ekavarṇāśca te sarve, dhṛtanūtanavastrakāḥ |
 śobhante cikurāḥ syāmās-tadicchobhā viḍambakāḥ ||59||
 prakāśaḥ kathyate teṣām, ṣoḍaśaravibhāṣamaḥ |
 bhinnam bhinnamidānīm vā, jānīhi tatprakāśakam ||60||



lalāṭaṁ śobhate teṣāṁ, himānśuriva nirmalah |
 netrarūpaṁ mahacchreṣṭhaṁ, nāsikā ca manoharā ||61||
 śravaṇe cātisobhāḍhye, mukhaṁ cāpi viśobhanam |
 kapolau suṇḍarau teṣāṁ, hanuḥ sūryaprabhāsamā ||62||
 smaśrūṇāṁ kuntalā hrasvāḥ, bhrājantyudugaṇā iva |
 bimbīphalasamāvoṣṭhau, dantāśca maṇisannibhāḥ ||63||
 suratnālaṅkṛtaḥ kaṇṭho, maṇiyuktau priyau bhujau |
 śirodharā ca śobhāḍhyā, skandhau cātiviśobhitau ||64||
 teṣāṁ kaṭiśca nābhiśca, viśāle cātisobhite |
 saromaśobhitaṁ hṛcca, sanakṣatraḥ śaśī yathā ||65||
 jaṅghe cātisubhe pādau, padmapuṣpasamau tathā |
 aṅgulyo hastapādānāṁ, sūryyadīdhitisannibhāḥ ||66||
 nakhāni tatra lagnāni, caṇḍraghṛṇisamāni ca |
 hansānāṁ viśṛtaṁ rūpaṁ, sankṣiptaṁ kathitaṁ mayā ||67||
 dhanyau ca pitarau tasya, yo labheddhansatāṁ janāḥ |
 kulaṁ ca muktimāyāti, saikottaraśatairjanaiḥ ||68||
 tasya dhanyastu deśāśca, grāmo dhanyaṁ grhaṇca nuḥ |
 vāsarā dhanyakā yeṣu, cintyate nāmasārakaḥ ||69||

|| sukrta uvāca ||

śrutarṁ tattvanmukhātsvāmin, hansānāṁ cottamaṁ sukham |
 idānīm gyānagamyarṁ yat-svarūpaṁ kathaya prabho ! ||70||
 tvadvacaḥ śrutisāro hi, janānāṁ hitakārakam |
 viśyālaṁpaṭaḥ prāṇī, yaigyāttvā viśayānstyajet ||71||

|| sadgururuvāca ||

etatsādhu tvayā pṛṣṭaṁ, vaco dharma ! satāṁ hitam |
 kṛtaṁ hansairiva gyānaṁ, tadrūpaṁ prāpyate ca taiḥ ||72||
 pṛthivījalate jānsi, vāyurambarameva ca |
 pañcasu prabalarṁ tatvaṁ, vāyurṁ jānihi dharma bhoḥ ||73||
 trividhaḥ pavanā gyeya, uttamo madhyamastathā |
 kaniṣṭhaśca mahābuddhe, sarvalokagato hi saḥ ||74||
 bhakto 'bhaktaśca vāyurvai, sādhuśādhureva ca |
 pavano janma mṛtyuśca, pavanaścañcalaḥ sthiraḥ ||75||
 arūpo vā sarūpo hi, vāyuśca sabalo 'balaḥ |
 dhīro 'dhīraśca vāyurvai, moho 'mohastathaiva ca ||76||
 buddho 'buddhaśca vāyurvai, śravaṇāśravaṇe tathā |
 jīvanti pavanālokaḥ, pavanaḥ pavanīkaraḥ ||77||
 pavanaścābhrakādhārāḥ, pavano dharaṇī dharaḥ |
 ceṣṭate pavanenārkaś-tenaiva ca nīśākaraḥ ||78||
 pavanastārakāḥ sarvāḥ, pavano raśmayastathā |
 nirākāro mahāyanta, pavano yantrameva ca ||79||

bhoktā bhogyañca vāyurvai, pavano bhogasāadhanam |
 bālyādayastathāvasthā, rasāśca pavano hi ṣaṭ ||80||
 rādhnoti pavanam yogī, mātṛādvādaśakaiḥ kramāt |
 dvayamekaśca vāyurhi, cātmāpi pavano vaśī ||81||
 pavanah śītamūṣṇaḥ ca, pīyūṣaḥ viṣameva ca |
 vāto dṛṣyamadrṣyam ca, kṣīraḥ ca pavano ghṛtam ||82||
 pavano 'dhastathā cordhvaḥ, vāto varṣayate jalam |
 pavano gītavādye vā, ṛtavaḥ pavanaśca ṣaṭ ||83||
 digīśvarāśca vāto hi, diśaḥ sarvāśca mārutaḥ |
 tridaśaḥ pavanaḥ sarve, kālaśca pavano balī ||84||
 prāṇinaḥ pavanaḥ sarve, trailokyam pavanaśca vai |
 carācaramayam viśvam, pavanādhārameva hi ||85||
 idānīm jalasaṅkhyāśca, vātasankhyāḥ sukham śṛṇu |
 tāni sarvāṇi jītvā tvam, sārāśabdam vicintaya ||86||
 diśastvaṣṭaguṇīkṛtya, bāṇaissaṁmelitāstathā |
 ete tu pavanāḥ santi, trailokye na tu satpure ||87||
 diśastu triguṇīkṛtya, rasaiḥ saṁmelitāni ca |
 jalāni tvam vijānīhi, gyātvā tvasatyatām bhaja ||88||
 sārāśabdam mahadrūpaḥ, sarvamūlam manaḥ param |
 cintaya śrutisāraṁ tam, koṭisūryasamaprabham ||89||
 gyānena śabdasārasya, koṭijanmakṛtam ca yat |
 pāpaṁ tu dahyate śīghraḥ, tṛṇarāśīryathāgninā ||90||
 sārānāma param tattvaḥ, smaryate ca yadā naraiḥ |
 brahmādayastadagre hi, vartante kiṅkarā iva ||91||
 karmabaddhaśca yo lokaḥ, karmarogeṇa pīḍyate |
 tasya tu bheṣajaḥ nāma, nānyopāyaśca dharma bhoḥ! ||92||
 nirālaṁbaram nirākāraṁ, dhyeyamūrtyekanirbharam |
 sarvaśakti jagaddhātṛ, trailokye mahato mahat ||93||
 || dharmadāsa uvāca ||
 brahmaviṣṇumahādevās-trayo devāśca santi te |
 kuto jātā bhavotpatti-sṭhitisānhārakārīṇaḥ ||94||
 nirañjanaḥ saśaktim tu, teṣāmutpattikāraṇam |
 gāyaṇti munayaḥ sarve, yogairdhyāyanti te ca tam ||95||
 etaṁ me saṁśayaḥ gāḍhaḥ, chindhi tvam bho dayānidhe |
 nirmalenetihāseṇa, brūhi sārōpadeśakam ||96||
 || sadgururuvāca ||
 bho sukṛta mahābuddhe, hyetatpṛṣṭam tvayā hitam |
 tasyottaramidānīm tvam, praṣṭā śṛṇu yathāvidhi ||97||
 hr̥ṣṭo 'bhūtsvecchayā cādi, puruṣo bījarūpakah |
 dve dale hi tato 'bhūtām, brahmaśaktyabhidheyake ||98||



tadeva śabalaṁ brahma, mūlaṁ tatkathyate budhaiḥ |
tato brahmādayaḥ śākhās-trayo 'bhūvaṅguṇātmakāḥ ||99||
tebhyastu pañcabhūtāni, jātāni copaśākhikāḥ |
tato jātāni patrāṇi, prakṛtipañca vinśatiḥ ||100||
prāṇināṁ vāsanāḥ sarvāḥ, śubhā evāśubhāstathā |
tāśca gāyanti puṣpāṇi, sāraśabdavido janāḥ ||101||
phalāni putrapautrādyāḥ, sukṛtaṁ duṣkṛtaṁ tathā |
bijaṁ vṛkṣamayāṁ bhūtvā, tiṣṭhedbhinnāṁ śiromaṇiḥ ||102||
viśvavṛkṣaḥ samāśena, samūlaḥ kathito mayā |
chittvainaṁ vivekena, bijaṁ dhāraya dharma bhoḥ ||103||
mūlaṁ yacchabalaṁ brahma, tannāmauṅkāra eva hi |
jaganmayena jātena, tenedaṁ dhāryate jagat ||104||
omkāraṁ nirguṇaṁ viddhi, nirvikāraṁ parātparam |
prakṛti puruṣau bhūtvā, sa ca sansṛiyate guṇān ||105||
omkāraḥ pañcabhūtāni, sthāvarā jaṅgamāstathā |
praṇavo 'puṇyapuṇye hi, prāṇādivāyavaḥ sa ca ||106||
omkāra īśvaro jīvaḥ, prakṛtiḥ pañcavinśadhā |
sūryācandrau tathaunkāro, hyaunkārastārakāśca vai ||107||
omkāro rajanī cāhaḥ, sarvavidyāstathaiva ca |
tirthavratāni vai so 'sti, yagyo yagyavidastathā ||108||
yogī yogakṛyā yogaḥ, praṇavo nātra saṁśayaḥ |
omkāraśca naro nārī, sukhaduḥkhe bhayābhave ||109||
omkāro janma mṛtyuśca, so 'vasthā bālyakādayaḥ |
catasraḥ khanayaḥ so 'sti, tathomkāraḥ parāvaraḥ ||110||
vidyādharaśca gandharvā, rākṣasā bhūtakinnarāḥ |
piśācā guhyakāścaiv-āpsarasāḥ siddhayakṣakāḥ ||111||
kūrmavarāharūpādyā, vartate praṇavo vibhuḥ |
meruprabhṛtiśailāśca, svargo 'svargastathaiva saḥ ||112||
śrotravagakṣīrasanā, - ghrāṇavākpāṇi pādakam |
pāyūpasthaṁ manaścaivaṁ, praṇavo hi nigadyate ||113||
praṇavo hi samastasya, bījabhūtaḥ samīritaḥ |
carācarasya viśvasya, vaṭabījamiva sthitaḥ ||114||
kūrmāṅgāni yathā svairāṁ, kuñcanti prasaranti ca |
tathāhi praṇavādviśvaṁ, bhavedvā layatāṁ vrajeta ||115||
nirguṇaṁ hi yadā brahma, svecchayā saṅgaṁ bhavet |
tadā karoti sansāraṁ, svecchayā ca visarjati ||116||
praṇamanti ca ye sarve, brahmādayaḥ surāsurāḥ |
bījabhūtamasaṅgaṁ yat, sūkṣmaṁ tatpravidanti te ||117||
vedaśāstra purāṇāni, vedāṅgāni ca sarvaśaḥ |
gāyanti tadyaśastāni, nānādharmadharāṇyapi ||118||

kevalam nāma sārōno, prāpyate yoga siddhibhiḥ |
 prāpnuvanti janāḥ kecid-guru kṛpābalena tu ||119||
 nirguṇopāsānām kṛtvā, prāpnuvanti nirañjanam |
 sthirāstatra tu kecinna, tato 'pyāvartanam punaḥ ||120||
 śakte rupāsakāḥ kecid, dhyāyanti tām dṛḍhavrataḥ |
 bhavanyudūni te svarge, hyāvartante punarbhuvi ||121||
 saguṇopāsakāḥ kecin-nāmarūparatā hareḥ |
 yāvadviṣṇunivāso 'sti, vaikuṇṭhe nivasanti te ||122||
 tapānsi kurvate kecid, ghorāṇi vimalāni ca |
 bhuktṛvā svarge sukhān te 'pi, punarbhūpā bhavanti vai ||123||
 bhuvi tatra sukhān śeṣān, bhujiyate 'lpadināni vā |
 tataste narakān yānti, nānāyonīrdharanti ca ||124||
 dānapuṇyaratāḥ kecit, bhuñjante puṇyajān sukhān |
 bhuvi kulaṁ śuci prāpya, labhante puṣkalaṁ dhanam ||125||
 vidyān nīrogadehaṁ ca, subhāryān susutaṁ tathā |
 śāstragyānān śūratvaṁ, krīḍāhāsyavinodakān ||126||
 vilasanti bahūnbhogān-maṅgalāni dine dine |
 rājyaṁ niṣkaṇṭakante na, muñceyurjanmamṛtyubhiḥ ||127||
 dānaṁ puṇyaṁ ca homaṁ ca, tūthaṁ vrataṁ tathaiva ca |
 tadbalānmanujo bhūtvā 'parān yonim ca gacchati ||128||
 puṇyamārādhyate yaiśca, prāpyate susukhaṁ phalam |
 sujanma vā tathāpi taiś-cānte naraka eva hi ||129||
 rādhyate sadguṇo dharmas-teṣān tu svārgikaṁ sukhān |
 yai rajoguṇasammīśraḥ, prāpyate mṛtyulaukikam ||130||
 tamomiśraḥ kṛto dharmas-te tu yāntyadhamān gatim |
 nānākaṣṭāni tatraiva, bhuñjante 'nekajanmabhiḥ ||131||
 duḥkhālayo mahāghoro, narako jantupīḍakaḥ |
 śruteṣu tasya duḥkheṣu, yānti romāṇi prordhvatām ||132||
 janturyoniṣu cānyāsu, nṛdehaṁ vāñchati dhruvam |
 dhanam tato 'pirājyaṁ, hi rājyāttu narakam svataḥ ||133||
 śuddhāmicchān janastasmātsāranāmni cikīrṣati |
 anyān gyānabalenaiva, tyaktavānsa sukhī bhavet ||134||
 śreṣṭho vaikuṇṭhaloko hi, svargātsaṅkathyate budhaiḥ |
 tatrāsti paramaṁ saukhyaṁ, tato 'pyāvartanam punaḥ ||135||
 garbhavāsaṁ labhetprāṇī, ghoram santāpakārakam |
 tatra yāte bhavetkinnv-aparam janma dhṛtaṁ yadi ||136||
 narakānpaṇca bhuñkte vai, jīvo 'yaṁ dehasaṅgataḥ |
 sanśayaṁ ca jarāṁ janma, kālaṁ vyādhīnstathaiva ca ||137||
 dehasaṅgāt-kṛtaṁ karma, bhoktuṁ vai narakam gataḥ |
 prapīḍyate yamairnityaṁ, nānātāpasamāgamaiḥ ||138||



calanam cāsīdhārāyām, sikatāyām tathaiva ca |
 taptāyām śayanam tatra, tadvyākhyām kathayeddhi kaḥ ||139||
 kurutaścitrāguptau hi, dharmādharmavinirṇayam |
 pāpaṁ puṇyaṁ ca taṁ jīvaṁ, bhojayataḥ punarbhuvi ||140||
 janmamṛtyumahāduḥkhe, naraścakramiva bhramet |
 svarge 'pi no sthīrībhāvo, labhedgarbhaṁ punaḥ punaḥ ||141||
 pātālādbhūtalādvāpi, nāke 'sti sukhapuñjakaḥ |
 taṁ labhet sunāsīro, mṛtyustasyāpi niścayam ||142||
 yathā svapnavilāsaśca, jāgrati naiva dṛśyate |
 tathā māyākṛto bhāvo, brahmagyāne vilīyate ||143||
 tiṣṭhantyaṁ ciraṁ te 'gyāḥ, samādhisthāśca yoginaḥ |
 yathā nāgā nagā vṛkṣās-teṣāṁ cetkiṁ bhavetsukham ||144||
 śataṁ varṣāṇi jīvedvā, kaścideva sahasrakam |
 lakṣaṁ koṭīṁ yugāntaṁ vā, kalpaṁ mṛtyurapi dhruvam ||145||
 cintako hyādināmnaśca, yo 'lpakālena jīvati |
 so 'pyadyaiva bhavenmukto, dehādhyāsavidārakaḥ ||146||
 nānyadārādhanam śreṣṭhaṁ, tvādināmasamaṁ priyam |
 no vasanti punargarbhaṁ, tadārādhanakārakāḥ ||147||
 yadbrahma saccidānandaṁ, tadeva tvādināma hi |
 icchārūpi jagaddhātṛ, kāraṇaṁ cāpyasaṅgakam ||148||
 yo japedakṣayaṁ nāma, muktistasyāsti niścayam |
 dahati karmakāṣṭhāni, gyānena nātra saṁśayaḥ ||149||
 dehena saha yuktasya, pratyavāyo na tasya ca |
 yathāgnau śodhitaṁ hema, śliṣyati na malaṁ punaḥ ||150||
 nāmasnehī ca yaḥ sādhuḥ-na taṁ spṛṣati karmakam |
 kṛtāmikṣe yathā dugdhe, punarno labhate ghṛtaṁ ||151||
 dhārmikā yoginaḥ siddhāḥ, paṇḍitā vā tapasvinaḥ |
 tattulyā na ca te sarve, sūryeṇoḍugaṇā iva ||152||
 || dharmadāsa uvāca ||
 mahimā sāranāmno hi, vistareṇa mayā śrutaḥ |
 śrotrīṇāṁ supriyaḥ svāmin, pāvanaḥ sukhadaśca saḥ ||153||
 tathāpi tatkaṭhaṁ prāpyaṁ, mumukṣūṇāṁ vada prabho |
 kinnu mantreṇa yantreṇa, kimvā dhyānena sevayā ||154||
 || sadgururuvāca ||
 bho dharminyatvayā pṛṣṭaṁ, sāranāma surūpakam |
 taccātisūkṣmarūpaṁ syād-vetti no sthūladṛṣṭikaḥ ||155||
 brahmā viṣṇurmahādeva, bhāratī vā gaṇādhipaḥ |
 siddhāstu munayaḥ sarve, yathābhāvaṁ bhajanti vai ||156||
 pratyakṣaṁ no 'pi teṣāṁ tu, bhavedrūpaṁ kadācana |
 niḥsaṅkalpajanāḥ kecit, paśyanti svavicārataḥ ||157||

yathaikasminstarau santi, śākhāpatraphalāni ca |
yasya yatra bhavecchradhā, tena tatprāpyate ca vai ||158||
prakṛtyādīni rūpāṇi, bahūni brahmaṇastathā |
yathā gurumukhādyena, prāptam tatra sa vai dṛḍhaḥ ||159||
bijarūpaṁ ca yatsūkṣmaṁ, no prāpyaṁ sadguruṁ vinā |
tasmācca tatprasādena, labhyaṁ brahmasvarūpakam ||160||
yadā mano bhavedyasya, brahmarūpaparāyaṇam |
tadā cāntarbahirvāpi, brahmaiva dṛśyate śubham ||161||
paraṁ brahmā 'paraṁ caiva, darśanādarśane tathā |
brahmaiva śatrumitre hi, bhāvo 'bhāvastadeva ca ||162||
svāmī vā sevako brahma, kāraṇaṁ kāryameva ca |
brahmaivādi tathā cāntaṁ, madhyaṁ yad brahma taddvayoḥ ||163||
svargaṁ vā bhūtaṁ brahma, pātālaṁ ca tathaiva hi |
gagaṇaṁ brahma vāyuś-caivāgnijaladharāstathā ||164||
carācaramayaṁ brahma, sarvaṁ yadvīśvameva tat |
surā brahmāsuraścaiva, vidyādharaḍayo 'pi ca ||165||
brahmaivendrādayo devā, gandharvāśca gaṇāstathā |
sūrya candrāvapi brahma, brahmaivoḍugaṇāśca ye ||166||
akhilādhārakaṁ brahma, tathā cintyamacintyakam |
yatsthūlaṁ kāraṇaṁ sūkṣmaṁ, sarvaṁ brahmanmayaṁ jagat ||167||
sarvaṁ brahmeti bhānantu, satyaṁ dvitīyamanyathā |
yaddṛṣṭaṁ tadekaṁ syāt, brahmaitatsādhulakṣaṇam ||168||
śayane jāgrati brahma, sthairye vā gamane tathā |
jagati durlabhaḥ sādhu-retallakṣaṇasañyutaḥ ||169||
dhṛtvainaṁ prathamāṁ bhāvaṁ, nistatvaṁ rādhayetpunaḥ |
mūlaṁ mantraṁ ca yo dhanyo, janaḥ sa hantsatāṁ labhet ||170||
brahmagyānamidaṁ śuddhaṁ, kathitaṁ cittaśāntaye |
adya tvaṁ haṭhayogaṁ ca, pañcakleśaharaṁ śṛṇu ||171||
kathitāni tadaṅgāni, yamo niyama āsanam |
prāṇāyāmaścaturthaṁ ca, pratyāhāraśca pañcamam ||172||
ṣaṣṭhaṁ ca dhāraṇā nāma, dhyānaṁ ca saptamaṁ tathā |
aṣṭamāṅgaṁ samādhiśca, vāsanārodhako 'sti saḥ ||173||
sanlagnasamputānyaṣṭau, kañjāni sphoṭayanti ye |
prāṇāpānanirodhena, tejaḥ paśyanti teṣu te ||174||
ekavīṁśasahasrāṇi, ṣaṭśatairadhikāni ca |
yathākramaṁ hi padmeṣu, kurvatāmajapāstu vai ||175||
prathamāṁ padmamādhārāṁ, raktavaṇaṁ caturdalam |
ṣaṭ śatāni japedyogya-japāstatra gaṇādhipaḥ ||176||
dvitīyaṁ ṣaṭdalaṁ padmaṁ, svādhiṣṭhānaṁ harinmayam |
ṣaṭ sahasrajapānstatra, japettasyādhipo vidhiḥ ||177||



nīlavarṇamayam padmam, tṛtīyam maṇipūrakam |
 ṣaṭ sahasraṇipānstatra, cāṣṭapatram patirhariḥ ||178||
 tūryamanāhatam śubhram, dvādaśadalasañyutam |
 ṣaṭsahasraṇipānstatra, japedyogyadhipaḥ śivaḥ ||179||
 viśuddham pañcamam padma, ṣoḍaśadalasañyutam |
 bhāratī devatā tatra, sahasram tvajapā japet ||180||
 ṣaṣṭham hi brahma randhrākhyam, tridalam gīyate budhaiḥ |
 sahasramajapāstatra, candro 'mṛtamayaḥ patiḥ ||181||
 āgyākhyam saptamam padmam, dvidalam cātisobhitam |
 tatra hyātmā sthito devaḥ, sahasramajapā japet ||182||
 yogibhiraṣṭamam padmam, gītam dalasahasrakam |
 pūrvoktā ajapāḥ sarvā, japeyustatra sādhakāḥ ||183||
 koṭisūryaprabhāsprgdhi, tadeva paramātmam |
 sthānam tatra sthito yogī, labhetsāmādhikam sukham ||184||
 tasyopari mahatpadmam, śuddham cāsaṅkhyapatrakam |
 anantaravitejaḥsprk, tatrasthaḥ puruṣo mahān ||185||
 etatpadmam mahacchreṣṭham, gītam tatkaime yogibhiḥ |
 procyate 'dya mayā tubhyam, gyātvedam susukham labheḥ ||186||
 ādināma param brahma, tatraiva susthitam svayam |
 tadrūparādhakaḥ prāṇī, satyalokam pragacchati ||187||
 svātmārūpam samāśritya, nimagnaḥ paramātmam |
 eko yaḥ kevale rūpe 'nīsam sannidhivānbhavet ||188||
 yathaiva hyagnisandagdhaḥ sudhātuḥ śuddhatam vrajet |
 prāṇī nāmaratastyaktvā, kākataḥ hansatām tathā ||189||
 so 'ham tatvam mahattattvam, janaḥ prāpya viśeṣataḥ |
 gyānayogāddhaṭhādvāpi, cātau nāmarataḥ punaḥ ||190||
 sāranāmno hi lābhārtham, rādhnoti mokṣagrāhakaḥ |
 gyānayogam haṭham vāpi, līnastasmin bhavettataḥ ||191||
 yadātikaṭhināu hyetau, no labhetsādhako janaḥ |
 tadā tu sugmopāyam, bhaktiyogam vidhārayet ||192||
 bhaktiyogabalādeva, prāpyate ca dvayoḥ phalam |
 yato bhaktibalam śreṣṭham, tasmātkāryam nīrantaram ||193||
 trividhā kathitā bhaktir-navadhā daśādhā parā |
 prathamam hi tataḥ kāryā, navadhā muktikāṅkṣibhiḥ ||194||
 navadhā bhaktiyuktā ye, te santi sujanā janāḥ |
 aṅgāni navadhāyāśca, śṛṇu tāni pṛthak pṛthak ||195||
 gurorācaranam mukhyam, dvitīyam sādhusēvanam |
 sannāmarāṭanam snehāt-tṛtīyametadeva hi ||196||
 śravaṇam gyānavākyasya, śraddhayaitaccaturthakam |
 tato bhavetsataścittān-māyā 'bhāvaśca pañcamam ||197||

sārāsāravivekastu, ṣaṣṭhañca kathyate budhaiḥ |
 satyavākyasamuccārah, saptamaṁ paricakṣyate ||198||
 aṣṭamaṁ samadrṣṭiśca, navamaṁ śīlatāguṇaḥ |
 ete nava guṇā bhakter-bhavābdhau taraṇīsamāḥ ||199||
 ete cāsmanmate mānyā, navadhābhaktijā guṇāḥ |
 anyeṣāṁ tu mate ye syus-tānapi śrṇu dharma bhoḥ ||200||
 īśvarasya guṇagrāma, śravaṇaṁ tasya kīrtanam |
 nirantaramahorātraṁ, tannāmoccāraṇaṁ tathā ||201||
 pādapadmadvayīsevā, pūjanaṁ cābhivandanam |
 dāsyāṁ sakhyāṁ tathā viṣṇoḥ, punaścātmasamarpaṇam ||202||
 pūrvoktānāṁ ca teṣāṁ tu, hyeten 'targatā matāḥ |
 tasmātte nirmalā dharmā, dhāraṇīyā muhurmuḥuḥ ||203||
 navadhā bhaktihīnaistu kāryāratiryathāvidhi |
 tatra guroḥ satāṁ saṅgo, vidheyo mokṣabhāginām ||204||
 prathamāṁ cārghyapādye tad-gurorarthāṁ visarjayet |
 tatastatpūjanaṁ kṛtvā, punastaccharaṇaṁ bhavet ||205||
 sādḥūnāṁ ca yathāśakti, pūjanaṁ kriyatāṁ punaḥ |
 miṣṭānnabhojanenaiva, candanādivilepanaiḥ ||206||
 darśanādeva sādḥūnāṁ, naśyanti svārjitā aghāḥ |
 tasmātkāyamanovāgbhiḥ, kāryaṁ taddarśanaṁ sadā ||207||
 tato hi mārjanaṁ kṛtvā, liptvā vā saudhakādikam |
 sthānasya sujanaḥ svasya, bhūmiṁ prakṣālayetpunaḥ ||208||
 niśāyā āgame prāpte, vitānaṁ śuklavastrajam |
 tanuyādāmrapatrasya, vandanavālikāyutam ||209||
 tato vitānamadhye hi, savitastikarāntarāḥ |
 śvetapuṣpakṛtāḥ pañca, vilāmbeyuśca mālikāḥ ||210||
 navīnaṁ śvetavastrasya, hyāśanaṁ dhārayettataḥ |
 dhṛttvā samastavastūni, prāhvayetsadgurum punaḥ ||211||
 tataḥ snānaṁ guruḥ kṛtvā, sulagnaṁ sādḥayet punaḥ |
 āsane susthirībhūya caukam cāru vipūrayet ||212||
 caukamadhye dharet paścān-nirbhagnaṁ kadālī dalam |
 tadupari ca vastūni, pavitrāṇi vidhārayet ||213||
 karpūramagurum śubhraṁ, śuci pūgaphalāni vai |
 candanādisugandhāni, drākṣādayaḥ sumevakāḥ ||214||
 nārikelo varaḥ sthūlaḥ, sabhāraśca navīnakāḥ |
 ekaścaiva tathā pañca, dhartavyā vai yathāvidhi ||215||
 śarkarā ca pavitrā hi, śuklavarṇā tathaiva ca |
 pālāśapatrapātre sā, dhartavyā pramitā śubhā ||216||
 sthūlatāmbūlapatrāṇi, chidrādivirahāṇi vai |
 vidhāryāṇi ca tatraiva, pañcavinśādhikaṁ śatam ||217||



elālavaṅgakānścaiva, bahupuṣpaphalānyapi |
 ānetavyāni sarvāṇi, tatraiva śraddhayā saha ||218||
 sāmagryo bahavaḥ santi, hyalpaśaḥ kathitā mayā |
 anyāngranthān samālocya, kāryohi cāratervidhiḥ ||219||
 godhūmasūkṣmacūrṇaṇ ca, ghṛtaṁ tailaṇ ca taṇḍulam |
 ityādayaḥ samastā hi, sāmagryo bahudheritāḥ ||220||
 dhṛtvā samastavastūni, chādayet dhautrakādibhiḥ |
 tataḥ samarpya puṣpāṇi, candanaṇca vicarcayet ||221||
 jyotiḥ - sthālī ca kumbhāśca, kalaśaḥ pañcavārttikah |
 dhāryāśca kadalīstambhāḥ, supatrāḥ paritastathā ||222||
 pūrṇaṁ sarvavidhiṁ kṛtvā, paścājjyotiḥ prakāśayet |
 maṅgalāni tataḥ sarve, gāyantu sādhaso janāḥ ||223||
 ekottaraṁ śataṁ caiva, nāmāni puruṣasya vai |
 uccārayet tadācāryaḥ, punardhyānaṁ vidhārayet ||224||
 sāraśabde bhavenmagnaś-cittasaṅkalpavarjitaḥ |
 dhyānānte puruṣasyaiva, stutiṁ vistārayettadā ||225||
 tāraya dīnabandho mām, tāraya tvaṁ dayānidhe |
 ityādi bhaktivākyāni, hyuccārya praṇametpunah ||226||
 ardharātre gate paścāt-paśyettu svasvaraṁ guruḥ |
 sādhubhiśca sahotthāya, jyotiḥ sthālīm ca bhrāmayet ||227||
 svānśārpakastathā canyo, jyotiḥ sthālīm prapūjayet |
 svarṇarājatatāmraṇām, mudrābhiśca subhāvukaḥ ||228||
 nālikeram tadotthāpya, luñcayetsnāpayetpunah |
 candanena tamarcitvā, śabdaṁ smṛtvā hi cārpayet ||229||
 svalagnaṁ śiṣyālagnaṁ vā, sadguruḥ śodhayettadā |
 lagne sammilite caiva, nālikeram hi bhañjayet ||230||
 tasyāpi bhañjanasthānaṁ, suguruḥ prekṣya bhañjayet |
 bhañjayetsthānamullaṅghya, sa guruna vicāravān ||231||
 amṛtaḥ sāraśabdo ya, uccārya taṁ hi bhañjayet |
 eti hansastadā lokaṁ, vinā mantraṁ bhramedbhuvī ||232||
 antaḥsāro yadi śveto, bhavellāṅgalinastadā |
 nīscayaṁ tvaṁ vijānīhi, sa śiṣyaḥ śuddhamānasaḥ ||233||
 asitaśced bhavedyasya, jigyaśo ranśabhāginaḥ |
 no prāpnottyuttamaṁ tattvaṁ, sāro laṅgalinastadā ||234||
 tāmbūlaṁ śobhanaṁ dṛṣtvā, smaraṇaṁ prathamam paṭhet |
 muktimantraṁ likhettasmin-chalākāmṛtaklinnayā ||235||
 nālikerāṅkuraṁ caiva, sārāṁ śvetaṁ saśarkaram |
 supatre mudrite dhṛtvā 'jarāya tatsamarpayet ||236||
 ekottaraṁ śataṁ caiva, nāmāni puruṣasya vai |
 vipaṭhecca tadācāryo, bhāvayuktaḥ sumānasaḥ ||237||

ekottaraśatagyo yo, nālikeram dharetkare |
 sa coddhārayate jīvān, nāvikah pathikāniva ||238||
 ekottaraśatāddhīno, manomattaśca yo bhavet |
 saiva bhrāmayate jīvān, mūrkhō nausthanarānyathā ||239||
 sāraśabdamanārādhyā, haṭhādeva dharedyadi |
 nālikeram ca yo mūdhaḥ, sa sadā vibhramedbhuvi ||240||
 tasmādetatparam dhyānam, smaraṇam bhajanam ca tat |
 yo 'gyo naivam vidhatte ca, gacchedyamapurim sa vai ||241||
 granthānāmapi sarveṣām, sāro hyekottaram śatam |
 mūlagyānam tadevāsti, kevalam ramaṇīyakam ||242||
 etadeva samuccārya, bhāvanāvān gurustadā |
 hyekottaram śatam dhyeyam, kuryātpariṇatim tataḥ ||243||
 manolayam vidhāyāda, sāranāma sucintya ca |
 gurdadyātsuśiṣyāya, hyajarāṅkāṅkitam chadam ||244||
 tadā śiṣyaḥ samutthāya, pragrāhya karayoh puṭe |
 ubhayorapi tatpatram, kurvita daṇḍavannamaḥ ||245||
 aṅgīkṛtya gurorāgyām, sarveṣām ca satāmapi |
 evam yo bhakṣayetpatram, sa mukto nātra sanśayaḥ ||246||
 daṇḍavacca punaḥ kṛtvā, priyavākyaiḥ stutim tathā |
 pūjayitvā gurum sādhuṁs-tatastaccharaṇam bhavet ||247||
 imam bhaktimatarā caktam, bhāvanāvān karoti yaḥ |
 gacchati sa jano lokam, tatra sarvasukham labhet ||248||
 || sukṛta uvāca ||
 gyānayogastvayā proktaḥ, sa samagro mayā śrutaḥ |
 haṭhyogastvapi śreṣṭho, vārivāyujayī ca yaḥ ||249||
 bhaktiyogastayorbhinnah, śruto nāmaphalapraḍaḥ |
 nālikeravidheryogo, yathārtham so 'pi vai śrutaḥ ||250||
 athaitebhyaḥ paro dhyāna-yogo yaḥ sukhakāraḥ |
 tam śrotumahamicchāmi, kathaya tvam dayānidhe ||251||
 || sadgururuvāca ||
 gyānayoge haṭhe cedam, na sthitam cañcalam manah |
 śivādīṇca śukādīnvai, bhrāmayatyaniśam tu tat ||252||
 gorakṣasadṛśaḥ ko 'pi, nānyo gyātā jagatyabhūt |
 so 'pi manovaśī bhūtvā, vijigīṣāparo 'bhavat ||253||
 nāradādīmunīśāstu, siddhā vāpsarasastathā |
 no sthitāḥ kevale nāmni, te 'pi sarve manovaśāt ||254||
 catvāro me mahāśiṣyā, mukhyastvaṁ teṣu dharma bhoḥ |
 caturbhujaśca baṅkejaḥ, sahatejī caturthakaḥ ||255||
 kathitastu mayā tebhyaḥ, sāraśabdo mahābalaḥ |
 tasminste susthirībhūya, tārayiṣyanti sajjanān ||256||



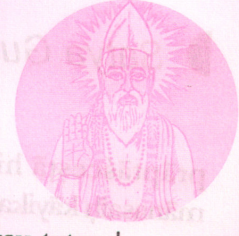
dvidhābhāvaṁ parityajya, dhyāyanti nāma kevalam |
vārivāyujaye yoge, teṣāṁ tatra tu no sthitiḥ ||257||
ekottaraśataṁ te hi, nāmāni ca bhajanti ca |
kṣamāṁ śāntiṁ dayāṁ dhṛtvā, nirbandhā vicaranti vai ||258||
yāsyanti śaraṇaṁ teṣāṁ, ye janā mokṣakāṅkṣiṇaḥ |
tebhyaste kathayiṣyanti, sāraṇāmabalaṁ param ||259||
dhanadāragṛhāsaktaḥ, karmasaṅgī bhavedyadī |
bandhanānmucyate so 'pi, sāraṇāmabalena ca ||260||
ye tvindriyāṇi karṣanti, vijayante manomatham |
tapo 'haṅkārasaṅyuktāḥ, sāraṇāma bhajanti na ||261||
no labhante tu te muktiṁ, nānāyonīrdharanti vai |
vijitya manmathaṁ tena, sāraṇāmaparo bhavet ||262||
rajovīryaprasaṅgo hi, jito yena vicārataḥ |
saiva nistatvatāmeti, sāraṇāmasamāśrayāt ||263||
narasya jitakāmasya, bhavettasya mahatphalam |
sāraṇāmasamālambān-muktireva na saṁśayaḥ ||264||
jagati mānalābhārthaṁ, yo 'nnaṁ tyaktvā payaḥ pibet |
vimukhaḥ sāraṇāmnaśca, sugatiṁ labhate na saḥ ||265||
tasmācca tapasāṁ saṅgāt-so 'haṅkāri bhavejjanah |
sāraṇāmāśrito yaśca, sa śīlādiguṇānbhajet ||266||
kevalaṁ nāma yo dhyāyen-manasā jihvayā japet |
tyaktvā tanuṁ layaṁ yāti, nistattve paramātmani ||267||
nistattvaṁ hi paraṁ dhyānaṁ, nistatvaṁ ca paraṁ tapaḥ |
tasmāttaccintako bhakto, durlabhyo jagatītale ||268||
nirakṣaraṁ paraṁ gyānaṁ, pañcāmṛtamayaṁ hi yat |
tadeva sāraśabdaḥ syāt, suratisnehi cākṣayam ||269||
nirakṣaraṁ paro hyartha, guhyād guhyaṁ nirakṣaram |
mūlaṁ nirakṣaraṁ mantraṁ, sarvādhāraṁ tadeva ca ||270||
brahmāṇḍaṁ kathitaṁ hyetac-chatakoṭikayojanam |
tata ūrdhvamanekebhyo, yojanebhyah pare hi saḥ ||271||
puṣpadvīpo mahacchobho, dyotito hīrakādibhiḥ |
asaṅkhyasūryacandrāṇāṁ, prabhābhiradhikaprabaḥ ||272||
kamalaṁ mṛdu tatraika-madbhutaṁ dalasaptakam |
mahatprakāśakaṁ nityaṁ, sthitaṁ tasminnirakṣaram ||273||
sākāraṁ vā nirākāraṁ, tasya rūpaṁ vilakṣaṇam |
tasyātisūkṣmavṛttiḥ sā, sarvalokān prakāśate ||274||
kurvanti tannamaskāraṁ, hansāstatra sthitāḥ sadā |
tadeva saccidānanda-mādināma pramoditam ||275||
tisraśca śaktayastatra, cetanā hyubhayā tathā |
ullaṅghani ca suśreṣṭhā, lokotpattikarāḥ śubhāḥ ||276||

tatra loka 'calam saukhyam, vādyāni vividhāni ca |
santi suratayastatra, sapta hansasumuktidāḥ ||277||
svātiśca sahaḥ sindhuś-cāṅkurā śravaṇā tathā |
sundayā ca sulilā syuḥ, sarvā hansopakārakāḥ ||278||
jitayogī mahāgyānī, puruṣāgyāprapālakaḥ |
sadeho vā videhaśca, tatraiva vartate sadā ||279||
asaṅkhyasūryacandrāṇām, prabhābhiradhikam vapuḥ |
śobhitam tasya tam sarve, hansāstu praṇamanti vai ||280||
āvyayāyākṣayāyātha, cākathāya hyanādaye |
amarāya tvanantāya, hansarūpāya te namaḥ ||281||
anīhāya hyagādhāya, tvavyaktāyācalāya ca |
nirlepāya 'jarāyāddhā, hansarūpāya te namaḥ ||282||
acintyāya hyabhedāya, tvakāmāyā 'vināśine |
agamāgocarāyātha, hansarūpāya te namaḥ ||283||
apārāya tvalakṣyāyā-moghādibrahmaṇe tathā |
agrāhyāyāmitāyāho, hansarūpāya te namaḥ ||284||
viśaṅkāya tvarūpāya, sarūpāyābhayāya ca |
ajātāya hyakālāya, hansarūpāya te namaḥ ||285||
susthirāya pradhīrāya, svecchājātāya vai tathā |
śabdadhāmne tvavācyāya, hansarūpāya te namaḥ ||286||
aśokāyākhilatrātre, .hyantakanāśanāya ca |
tathā satsukṛtāyāddhā, hansarūpāya te namaḥ ||287||
sadgurave munīndrāya, tathā hi dīnabandhave |
sujanapratipālāya, hansarūpāya te namaḥ ||288||
sundayāsindhava caiva, prāṇanāthasvarūpiṇe |
karuṇānidhaye tveva, hansarūpāya te namaḥ ||289||
saccidānandarūpāya, satpuruṣāya śāśvate |
sattāsphūrtipradātre ca, hansarūpāya te namaḥ ||290||
adhamoddhārakāyaiva, satyalokasuvāśine |
tathā sarvamayāyaiva, hansarūpāya te namaḥ ||291||
janmamṛtyuprahartre ca, susukhāyājītāya ca |
nirahaṅkāriṇe tveva, hansarūpāya te namaḥ ||292||
tathāhi sarvamūlāya, sthūlāya sūkṣmarūpiṇe |
gyānadātre nirīhāya, hansarūpāya te namaḥ ||293||
sunāmne suśaraṇāya, tathā ca vigatāraye |
sarvādaye tathāntāyāya, hansarūpāya te namaḥ ||294||
niḥsaṅkalpāya satyāya, tathaivākalpyakīrtaye |
athaivam cākalaṅkāya, hansarūpāya te namaḥ ||295||
nirālambāya nitarām, bhaktidātre hyarāgiṇe |
tathaiva nirvikārāya, hansarūpāya te namaḥ ||296||



nirādhārāya nityam vai, paramānandarūpiṇe |
tathaiva hansenāthāya, hansarūpāya te namaḥ ||297||
svavaśīne tathā 'jasraṁ, jāgarūkasvarūpiṇe |
tathaiva sarvaśandātre, hansarūpāya te namaḥ ||298||
stutīnām nidhaye caiva, hyavarṇāyā 'kulāya ca |
akṣobhāya vimohāya, hansarūpāya te namaḥ ||299||
akleśasarvaṇāmne 'nīśasarvagyaāya vai tathā |
sarvabhāvanarūpāya, hansarūpāya te namaḥ ||300||
hiraṇyāmbarayuktāya, satyanāmne tathaiva ca |
nirakṣarāya nitarām, hansarūpāya te namaḥ ||301||
nirmāyāya tvakunṭhāya, hyabhramāya tvakarmanē |
bhavabandhanahartre ca, hansarūpāya te namaḥ ||302||
abhītāya hyalubdhāya, santāparahitāya ca |
kaivartāya bhavābdhau hi, hansarūpāya te namaḥ ||303||
ityādināmajāpaṁ vai, dhyānaṁ ca kurvatastathā |
naśyanti sarvakarmāṇi, prāpyate paramaṁ padam ||304||
sa ca dhyānabalādeva, satyaloke sadā vaset |
svakulasya samaṁ bhaktaś-caikottaraśatairjanaiḥ ||305||
tasmādetatparaṁ dhyānaṁ, sadā kurvanti ye narāḥ |
teṣāṁ tāpāḥ praṇaśyanti, prāpnuvanti paraṁ padam ||306||
koṭyenasāṁ ca kartāras-tathaiva śaivyakarmaṇām |
caturdaśānām no jīvā, labhante tadbālājjanim ||307||
mānavā ye prakurvanti, caitaddhyānaṁ tathā ratim |
nālikeravidhau dakṣās-teṣāṁ puṇyasya kā kathā ||308||
sarvagranthāstu gāvo vai, vatsaḥ syāttadvicāravān |
dugdhaṁ svāmarataṁ gyānaṁ, dogdhā sādhanasañyutaḥ ||309||
tapanaṁ tasya satsaṅgo, yāmanaṁ śuddhabhāvanā |
rajjuh sattvasthabuddhiḥ syāt, gṛhaṁ brahmanirūpaṇam ||310||
yo 'saṅkhyadalapadmācca, hyūrdhvaṁ sūkṣmadhvanistathā |
saiva saugandhyakaṁ tatra, svādestasya hi cintanam ||311||
ekarūpastvakhaṇḍo 'sau, bahirvā hyantarasthitaḥ |
lakṣyeta sati dehe yas-tadante tanmayo bhavet ||312||
līnaṁ yasya yadā cittarṁ, tasya puṣṭikaraṁ sukham |
evaṁvidhaṁ gṛhaṁ dharma, dattaṁ tubhyaṁ mayākhalu ||313||
tvaṁ tu dehi mumukṣubhyo, hyetaigyānamataḥ param |
tacchrutvā te prayāsyanti, muktirṁ nāstyatra saṁśayaḥ ||314||
etaddhyānaṁ paraṁ guhyaṁ, kṛpayā hi mayocyate |
tadgṛhītvā sukhaṁ tubhyaṁ, caīsyasi paramaṁ padam ||315||
|| dharmadāsa uvāca ||
mahimānastavānantāḥ, ko 'pi no kathitūṁ hyalam |
stutibhiśca katharṁ śakyas-tānahaṁ gaditūṁ prabho! ||316||

yaddhyānaṁ ca tvayā dattaṁ, mahyaṁ tatprāpyate na kaiḥ |
 tacchrutvaiva parā śantir-labdhā hi sukhapūrvakam ||317||
 gyānayogastathā dhyāno, bhaktiyogo mayā śrutaḥ |
 śaivyāni śrotumicchāmi, karmāṇi vistareṇa tu ||318||
 || sadgururuvāca ||
 śaivyāni śṛṇu dharma tvaṁ, karmāṇi ca caturdaśa |
 nindyāni narakam teṣāṁ, prāpako labhate dhruvam ||319||
 kāmāśca prathamam karma, kārpaṇyaṁ cāparam tathā |
 ṛtīyaṁ ca sadārogaś-cātilobhaścaturthakam ||320||
 pañcamam ca mahākrodhaḥ, paranindā ca ṣaṣṭhakam |
 sapṭamam bhaktirāhityam, sadvaimukhyaṁ hi cāṣṭamam ||321||
 navamam cātīdāridryam, daśamam rājasam tathā |
 ekādaśam kusaṅgaśca, dvādaśam tanupoṣaṇam ||322||
 trayodaśam ca dhūrtatvam-ahaṅkāraścaturdaśam |
 caturdaśaiva śaivyāni, karmāṇi kathitāni vai ||323||
 śaivyakarmayutā ye 'pi, pāpinaścāpakīrtikāḥ |
 te'pi dhyānabalenaiva, yānti muktiṁ hi niścitam ||324||
 jīvaghāti surāpī ca, mānsādo mātṛjāraḥ |
 jyeṣṭhabhrāturvihantā yas-tyajettatkarmakam yadi ||325||
 bhrūṇahatyākṛtā yena, viprahatyā tathaiva ca |
 gomedo bhakṣitam yena, tyajettatkarmakam yadi ||326||
 mithyāvādarato yo'pi, kirāto vadhikastathā |
 satam doṣyapakārī yas-tyajettatkarmakam yadi ||327||
 vṛkṣāṇāṁ chedako yo vā, dhvansetkūpaṁ ca vāpikām |
 haretparavasūnyeva, tyajettatkarmakam yadi ||328||
 mitradrohaḥ kṛto yena, tathā viśvāsaghātakaḥ |
 taskaro hinsako vāpi, tyajettatkarmakam yadi ||329||
 parastrīlampaṭo yo'pi, tathaiva gurutalpagaḥ |
 nindati vā śrutiṁ sādhuṁ tyajettatkarmakam yadi ||330||
 ātmaślāghāparo nityam, druhyecca kāraṇam vinā |
 kulaṭāsaṅgamī caiva, tyajettatkarmakam yadi ||331||
 yo 'tithibhyo 'pradāyaiva, svayaṁ vāśnāti bhojanam |
 svacitte yastapettāpāns-tyajettatkarmakam yadi ||332||
 sañcitarṁ vartamānaṁ ced-āgāmikaṁ ca karma yat |
 taddhi dhyānabalādeva, samagraṁ pravilīyate ||333||
 trividham kathitam karma, cottamam madhyamādhamam |
 trayāṇāṁ vāsanāstyaktvā, sadā dhyānaṁ pradhārayet ||334||
 na kāṅkṣā svargalokeṣu, muktau nāpi manorathaḥ |
 na kāṅkṣā dānapuṇyeṣu, yasya bhaktaḥ sa cottamaḥ ||335||
 sarvāśayaṁ ca tyaktvā yo, jivā vākkāyamānasam |
 sa ca dhyānarato bhūtvā, duḥkhātītaṁ sukhaṁ labhet ||336||



mathanācchabdasindhośca, labhante dhyānino janāḥ |
 caturdaśaiva ratnāni, bho dharminstānyapi śrṇu ||337||
 gyānayogo haṭhaścaiva, śabdasindhośca dvau taṭau |
 premabhaktirjalam tatra, tasya snehastvagādhatā ||338||
 suratirniratiścaiva, hyūrmayaḥ kathitā budhaiḥ |
 muktā mānādyabhāvaśca, hansāstu gyānino janāḥ ||339||
 mandācalo manaḥsthairyaṁ, phaṇikastu sudhīratā |
 sārāsārapraboddhāras-tridaśāstu vivekinaḥ ||340||
 teṣāntu prathamam prāptā, lakṣmīnāmaratiḥ śubhā |
 kaustubhaḥ sudayā caiva, suśīlam pārijātakam ||341||
 dhanvantariḥ parārtho hi, svātmānandastathā surā |
 kṣamā kāmādudhā proktā, toṣastvairāvato gajaḥ ||342||
 brahmabodhaparāvṛttiḥ, rambhā nṛtyakarā hi sā |
 bodho yo bhūmikāyuktaḥ, sa ca saptamukho hayaḥ ||343||
 amṛtam satyaviśvāsaḥ, svadharma dhanukhyayam |
 śankho bodhapradam vākyam, śubhaśānti sukham śaśi ||344||
 viṣam tvidam jagatsarvam, tajgyātvā hi tyajedbudhaḥ |
 evam labdhvā suratnāni, rājanṭe śrīdharādhikāḥ ||345||
 tasmāddhyānam param śreṣṭham, brahmatattvapraśakam |
 sadaiva ye prakurvanti, sukhinaste tu netare ||346||
 jīvanmuktasukham teṣāṁ, tvasti vedaphalam tathā |
 bhuvi parokārārtham, nānyathā vicaranti te ||347||
 prasannena mayā dattam, caitadguhyataram param |
 tubhyaṁ susādhave gyānam, tajgyātvā tvam sukhi bhava ||348||
 granthasya paṭhanādasya, śravaṇādvā tathaiva ca |
 niṣkāmaḥ prāpnuyurmuktim, sakāmāstu phalāni vai ||349||
 ekaṁ ślokaṁ tathā cārdham, paṭhanti śuddhamānasāḥ |
 janāste 'pi sukham caiva, yānti muktim na sanśayaḥ ||350||
 etasya paṭhanādeva, sarve vighnā viniścitam |
 naśyanti ca tathā rogā, kharjūvisphoṭakādayaḥ ||351||
 daivikā daihikāścaiva, bhautikā vā tathaiva hi |
 vinaśyanti trayastāpās-caitasya paṭhanādapi ||352||
 prātaḥkāle ca madhyānhe, sāyankāle japādapi |
 grahabhūtapīśācānām, pīḍā na syātkadācana ||353||
 vidyārthi labhate vidyāṁ, dhanarthi ca tathā dhanam |
 putrārthi ca śubham putram, yadyadiṣṭam tadeva tat ||354||
 vighrahaḥ saṅkaṭaścaiva, caurādīnām bhayaṁ tathā |
 naśyantyetajjapācchighram, parāpatsvāpadaḥ punaḥ ||355||
 bhujāṅgādvṛścikājjātāḥ, pīḍāśca vividhāstathā |
 mūrdhanetrodbhavā rogā, drutaṁ naśyanti sarvathā ||356||
 rājadvāre prayāte tu, mahāmānam labhennaraḥ |
 śmaśāne vā vane ghore, kutracinna bhayaṁ bhavet ||357||

prāptāśceṣṭā hi bhogā vai, hyetasya smaraṇādapi |
mānasaiḥ kāyikairduḥkhair-mocanaṁ ca bhavennṛmām ||358||
śuci sthāne pratiṣṭhāpya, mano rudhvā japanti ye |
ṛddhiṁ siddhiṁ tathā śreyaś-cāvaśyaṁ prāpnuvanti te ||359||
idaṁ stotraṁ paraṁ śreṣṭhaṁ, premayuktaḥ paṭhetpumān |
parā bhaktirbhavettasya, cānandaḥ prāpyate dhruvam ||360||
tīrthasnānātparaṁ śreṣṭhaṁ, bhavettasyādhiḥkaṁ phalam |
sādhusaṅgasamaṁ puṇyaṁ, tamovidhvansakaṁ ca yat ||361||
yagyādapi paraṁ lakṣyaṁ, darśacca paurṇamāsikāt |
prāpnoti pāṭhakastaddhi, devānāṁ durlabhaṁ ca yat ||362||
granthāśca bahavaḥ santi, svātmagyānodayaṅkarāḥ |
teṣu śreṣṭhatamaṁ cedāṁ, stotraṁ brahmanirūpaṇam ||363||
dāneṣu ca yathā hyannaṁ, raseṣu cāmṛtaṁ śubham |
mandāraḥ sarvavikṣeṣu, śreṣṭhaṁ grantheṣvidarṁ tathā ||364||
gandharvāṇāṁ yathā citra, uccaiḥśravā hayeṣu ca |
goṣu kāmādughā śreṣṭhā, ratneṣu cintyado maṇiḥ ||365||
tīrtheṣu ca yathā gaṅgā, yoniṣu tveva mānuṣī |
phaleṣu suphalaṁ mokṣo, jyotiṣmatāṁ raviryathā ||366||
ayaṁ granthastathā śreṣṭhaḥ, sarvagrantheṣu manyate |
yaṁ vivicya sukhaṁ santa, āpnuvantiādibrahmakam ||367||
namo 'stu vigyānavilāsakāya, śuddhāya buddhāya ca muktidātre |
gyanasvarūpāya tathā 'kṣayāya, cānandakandāya hyanantakāya ||368||
namo'stu nityāya nirakṣarāya, niṣkāmarupāya ca śāntidātre |
tathāvyayāya svajanopakartre, sthiraprabhāvēya ca satyanāmne ||369||
namo 'stvadehāya hyanādaye ca , vai saccidānandavilāsakāya |
niḥśeṣatrātre 'khilabodhakāya, duḥkhaprahartre karuṇābdhaye ca ||370||
saṅkalpaśūnyāya sukhārṇavāya, sarvopasraṣṭre karuṇākarāya |
svatāḥprakāśāya mudāikadhāmne, hyagyānadhvansāya namo 'stu nityam ||371||
gyānodayakaraṁ hyetat-tathā ca bhaktivardhakam |
brahmanirūpaṇam stotraṁ, kathitaṁ sārasaṅgraham ||372||
gurumūrtau ratirasya, sammataḥ sādhusaṅgamaḥ |
tasmai ca diyatāṁ grantho, nā ' bhaktāya kadācana ||373||
prataruthāya yo nityaṁ, paṭhati bhaktipūrvakam |
niścayaṁ gacchatī prāṇī, satyalokaṁ sanātanam ||374||
gyānadhyānavilāsakaṁ hi satataṁ, mānyaṁ ca pūrṇam gurum |
natvā tatkrpayā mayā bhagavati-dāsenā sanśodhitaṁ ||
hidaṁ brahmanirūpaṇam susukhadaṁ, prācīnakaṁ stotrakam |
bhūyātpāṭhacikīrṣatāṁ ca sulabhār-thasyaiva lābhapradam ||375||

|| itīśī sadguru kathita muktyupadeśakam kalimāla-vidhvansakaṁ
dharmadāsaśambodhanaṁ sārasaṅgraham śrīmad ādibrahmanirūpaṇam stotraṁ sampūrṇam ||

The word 'ādi' was added to this *grantha* name based on the view expressed by the late Pantha Sri Hajur Prakashmaninaam Saheb Kharsia.

॥ ग्रन्थ “श्रीमद् आदिब्रह्मनिरूपणम्” ॥



नाम के अनुसार ही इस ग्रन्थ का वर्ण्य-विषय “आदि-ब्रह्म” ही है। मुख्य रूप से इस ग्रन्थ में श्री धनी धर्मदास जी साहेब ने सद्गुरु कबीर साहेब से पाँच प्रश्न पूछे हैं। जिनके उत्तर सद्गुरु ने विस्तृत रूप से दिया है। उत्तर के क्रम में अन्य विषयों का भी मनोरम वर्णन है। प्राप्त प्रमाणों के अनुसार यह ग्रन्थ प्रारम्भ में ‘हिन्दी भाषा’ में था। बाद में इसे ‘संस्कृत-भाषा’ में निबद्ध किया गया। प्राचीन ग्रन्थ में संस्कृत भाषा की त्रुटियों को शुद्ध करने का कार्य श्रद्धेय सन्त श्री भगवती दास जी साहेब ने किया। बाद में उसे और भी शुद्धतम वर्तमान रूप में प्रस्तुत करने का श्रेय सत्यलोकवासी वंश प्रतापी श्री हजूर प्रकाशमणिनाम साहेब जी, खरसिया-म. प्र., भारत को है। उन्होंने इसकी अन्वयसहित हिन्दी टीका भी लिखी। पूज्य महन्त श्री सुकृत दास बरारी साहेब जी ने संस्कृत श्लोकों को हिन्दी के ‘दोहा’ छन्द में अनुवाद किया। उपरोक्त रूप में यह ग्रन्थ श्री कबीर आश्रम जामनगर-गुजरात-भारत से प्रकाशित है।

इस सद्ग्रन्थ का बहुत से सन्त एवं भक्त जन दैनिक पाठ करते हैं। कबीर-पंथ का यह बहुत ही सम्मान्य-ग्रन्थ है। इसकी कथा भारत में समय-समय पर लघु एवं वृहद् रूप में होती रहती है। त्रिदिवसीय, पञ्चदिवसीय एवं सप्तदिवसीय कथाओं का आयोजन विशेष रूप से होते हैं। इस ग्रन्थ में आत्मज्ञान का अथाह भण्डार है:-

जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठा
मैं बपुरा बूड़न डरा, रहा किनारे बैठा॥

जिन महापुरुषों ने इसमें गोता लगाया उन्होंने अवश्य अनमोल मोतियों को पाया है। इस ग्रन्थ का पाठ भी बड़ा ही फलदायक है; जो इस ग्रन्थ के माहात्म्य में उल्लिखित है:-

एकं श्लोकं तथा चार्धं पठन्ति शुद्धमानसाः।

जनास्तेऽपि सुखं चैव, यान्ति मुक्तिं न संशयः ॥३५०॥

इस ग्रन्थ के पाठ से दैहिक-दैविक-भौतिक त्रिविध तापों से मुक्ति एवं सभी प्रकार के विघ्नों का शमन होता है। साधु-जन इसमें उपदिष्ट साधना-पूर्वक जीवन व्यतीत करते हुये निःसंशय शाश्वत मुक्ति को प्राप्त करते हैं। क्रमशः इस ग्रन्थ में कारण और करण रूप सत्यपुरुष परमात्मा की वन्दना से मंगलाचरण किया गया है। सद्गुरु के नाम की महिमा का वर्णन है। धनीधर्मदास साहेब के प्रश्न के उत्तर में सद्गुरु निरक्षर सार-शब्द की साधना का विशद वर्णन किये हैं। अनहद-नाद की हठयोग-साधना का सुन्दर वर्णन है। नौ श्लोकों में सत्यलोक की मनोरम आँकी है, जिसका आगे भी वर्णन मिलता है। अजपा-जाप सार-शब्द की साधना का फल एवं पुनः सत्यलोक वर्णन है। वे साधु-जन धन्य हैं जिन्होंने सार-शब्द की साधना से हंस-रूपता को प्राप्त कर लिये हैं:-

धन्याँ च पितरौ तस्य, यो लभेद् हंसतां जनः।

कुलं च मुक्तिं मायाति, सैकोत्तरशतैर्जनैः ॥६८॥

ऐसे साधकों के माता-पिता सहित एकसौ एक पूर्वजों का उद्धार हो जाता है। अनन्तर ज्ञानमार्ग से मुक्ति का वर्णन जिसमें पञ्च-तत्त्व, वायु-वर्णन, जल-वर्णन व इनकी संख्या की

व्याख्या है। पुनः सारतत्त्व के महत्त्व का वर्णन है। प्रश्न के उत्तर में त्रिदेवों की उत्पत्ति, ऊँकार की विशद व्याख्या, निर्गुण, शक्ति, सगुण, तप का फल, दान, पुण्य, परोपकार इन विषयों पर चर्चा की गई है। सात्त्विक-राजसिक एवं तामसिक तीनों उपासनाओं के परिणामों का वर्णन किया गया है।

पुनः प्रश्नोत्तर में सद्गुरु ने “आदि-ब्रह्म” का विशद विवेचन किया है:-

चराचरमयं ब्रह्म, सर्वं यद् विश्वमेव तत् ॥६५॥

“सर्वं खल्विदं ब्रह्मा”

अखिलाधारकं ब्रह्म, तथा चिन्त्यमचिन्त्यकम्।

यत्स्थूलं कारणं सूक्ष्मं, सर्वं ब्रह्ममयं जगत् ॥६७॥

समस्त संसार को धारण करने वाला तथा चिन्तन में आने योग्य और चिन्तन में नहीं आने योग्य ब्रह्म ही है। तथा स्थूल, सूक्ष्म और कारण रूप जो जगत है वह भी ब्रह्म ही है ॥६७॥

“हठ योग” के आठ अंग यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि का वर्णन किया गया है। “अष्ट-कमलों” - मूलाधार-स्वाधिष्ठान-मणिपूरक-अनाहत-विशुद्धि-ब्रह्माख्य - आज्ञाचक्र और सहस्रार इन शक्ति केन्द्रों के स्वामी एवं जप संख्या, दल संख्या का वर्णन करते हुये नवम अनन्तदलों के चक्र का विवेचन है “भक्तियोग” में नवधा-भक्ति-गुरुवन्दना, साधुसेवा, सत्यनाम जप, ज्ञान श्रवण, माया का अभाव, सारासार विवेक, सदा सत्यवचन, समदृष्टि और शीलता का वर्णन करते हुये अन्य प्रकार की भक्तियों का इन नवों में समावेश बताया गया है। कबीर-पंथ में प्रचलित सात्त्विक गुरु-पूजा “चौका आरती” का वर्णन है।

पुनः प्रश्नोत्तर में “ध्यान-योग” का वर्णन करते हुये सत्यपुरुष परमात्मा (आदि-ब्रह्म) के एक सौ एक नामों का उल्लेख है। इस ग्रन्थ में वर्णित ज्ञान-क्षीर के मन्थन से ‘आदिब्रह्म’ रूप घृत की प्राप्ति का वर्णन है।

पुनः प्रश्नोत्तर में चौदह निन्दितकर्म-काम-कृपणता-सदारोग-अतिलोभ-महाक्रोध-परनिन्दा-भक्तिहीनता-सन्तों से विमुखता-अति दरिद्रता-राजस वृत्ति-कुसंगति-तनुपोषणता-धूर्तता-अहंकार इनके अतिरिक्त अन्य अपकर्मों का विवेचन है। निष्काम भक्त का सुबोध वर्णन किया गया है:-

न कांक्षा स्वर्ग लोकेषु, मुक्तौ नापि मनोरथः।

न कांक्षा दान पुण्येषु, यस्य भक्तः स चोत्तमः ॥३५॥

जो भक्त न सात स्वर्गों को चाहता है और न चार प्रकार की मुक्ति ही चाहता है; तथा जिसकी दान और पुण्यों के फलों में भी इच्छा नहीं है, वही भक्त उत्तम है ॥३५॥

शब्द सिन्धु के मन्थन से चौदह रत्नों - सत्यनाम में प्रीति, सुदया, सुशीलता, परोपकार, स्वात्मानन्द, क्षमा, संतोष, ब्रह्मबोधपरावृत्ति, सप्त भूमिकायुक्त बोध, सत्यविश्वास, स्वधर्म, अनुभववाक्य, शुभशान्ति, दुःखमय जगत का ज्ञान; इनकी प्राप्ति का वर्णन है। अन्त में ग्रन्थ के माहात्म्य का वर्णन करते हुये “आदि-ब्रह्म” की स्तुति की गई है।

यह प्रस्तुति आप सभी के लिये उपयोगी एवं कल्याणकारी हो यह मंगल कामना की जाती है।

॥ इति सत्यम् ॥